# नमाज़

## इत्तेहादे उम्मत की बुनियाद

मौलाना मुहीउद्दीन ग़ाज़ी

अनुवादक–
डॉ. रफीक़ अहमद

इत्तेहादे उम्मत का मिशन एक चौमुखी प्रोग्राम चाहता है, उपदेश और नसीहत के ज़रिये दिलों को नर्म करने का काम भी हो, इत्तेहादे उम्मत की अहमीयत भी बताई जाये, कि वह ऐसे ही एक फ़रीज़ा है, जिस तरह नमाज़ और ज़कात फ़र्ज हैं, साथ ही तदबीरी कोशिशें भी की जायें, उन मुक़ामात की निशानदेही की जाये, जहां इख्तिलाफ़ किसी ग़लत फ़हमी के नतीजे में पैदा हुआ, बिखराव की जड़ों को काटा जाये, इन रास्तों को बन्द किया जाये जहां से फ़िरक़ाबन्दियों को खूराक मिलती है और वह नुक्तये नज़र और अन्दाज़े फ़िक्र विकसित किया जाये जो इत्तेहाद के पहलू को प्राथमिकता देता हो, यह लेख भी इसी तरह की एक इब्तिदाई कोशिश है।

## *नमाज़ इख्तिलाफ़े उम्मत की वजह क्यों ?*

नमाज़ की शक्ल व सूरत और तरीक़ों पर जिस क़दर ग़ौर करें, यह यक़ीन पुख्ता होता है कि नमाज़ उम्मत के इत्तेहाद का अहम तरीन ज़रीया है, एक इमाम की पैरवी जिस क़द्र नमाज़ के अन्दर नज़र आती है, वह ज़िन्दगी के किसी और अमल में नज़र नहीं आती, बा जमाअत नमाज़ के दौरान एक इन्सानी गिरोह जिस तरह बराबरी के साथ सारे आमाल अन्जाम देता है, वह बस नमाज़ का इम्तियाज़ है, ऐसी नमाज़ के होते हुये उम्मत में इस क़दर शदीद इख़्तिलाफ़ हैरत अंगेज़ भी है और अफ़सोसनाक भी।

इससे भी ज़्यादा हैरत अंगेज़ बात यह है कि जिस नमाज़ के ज़रीये इत्तेहाद उम्मत के दरख्त की रोज़ाना परवरिश होती है, वही नमाज़ उम्मत के इख्तिलाफ़ात का सबसे बड़ा सबब बना दी गयी, जिस मस्जिद में सामूहिक एकता की सबसे अच्छी तालीम मिल सकती थी, वही मस्जिद फ़िरकाबन्दी की अलामत बना दी गयी है। आज उम्मत के बेशतर झगड़े नमाज़ को लेकर हैं, और मस्जिदें फ़िरक़ा बन्दियों का अखाड़ा बनी हुई हैं।

नमाज़ों को बुनियाद बनाकर उम्मत में जो झगड़े खड़े किये गये हैं, अगर आज उनसे हाथ उठा लिया जाये, और नमाज़ से सम्बन्धित इख्तिलाफ़ात की हक़ीक़त को जान लिया जाये, और उसके मुताबिक़ अपने रवइये में बदलाव लाया जाये, तो उम्मत के आपसी इख्तिलाफ़ात का अम्बार अच्छा खासा कम हो जायेगा। क्योंकि नमाज़ गन्दे और बुरे कामों से भी रोकती है, और आपसी टकराव से भी दूर रखती है।

### *नमाज़ का आलमी सबक़ आमोज़ मंज़र*

हज के मौक़े पर दुनिया भर के मुसलमान मस्जिदे हराम में एक इमाम की इमामत में नमाज़ अदा करते हैं, यह सारे मुसलमान अलग-अलग मसलकों से ताल्लुक़ रखते हैं, और अपने मसलक के मुताबिक नमाज़ पढ़ते हैं, जबकि इमाम साहब अपने मसलक के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ाते हैं,

एक इमाम के पीछे एक जमाअत में नमाज़ अदा करने के लिये किसी से यह नहीं कहना पड़ता कि अपना मसलक छोड़ो ताकि जमाअत से नमाज़ अदा हो सके, एक जमाअत में शामिल मुख्तलिफ़ मसलक के नमाज़ियों को दौराने नमाज़ कोई उलझन पेश नहीं आती, और न इमाम के पीछे पढ़ने वालों के दरम्यान कोई टकराव की नोबत आती है। सब एक साथ क़याम की हालत में रहते हैं, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना होता है कि किसके हाथ कहां पर बन्धे हैं, साथ ही सब रुकूअ में जाते हैं, और एक साथ रुकू से उठते हैं, फ़र्क़ सिर्फ हाथों की कैफीयत का होता है, कोई उठाता है, कोई नहीं उठाता है। गर्ज़ यह कि साफ महसूस होता है कि वह नमाज़ पढ़ रहे हैं, जिसकी हैय्यत पर उनका तकरीबन इत्तेफ़ाक़ है, और जो फ़र्क़ है वह नाकाबिले लिहाज़ और ग़ैर अहम है। इन नमाज़ की हैय्यत यानी ज़ाहिर पर उम्मत का जितना ज़्यादा इत्तेफ़ाक़ है वह हैरत अंगेज़ है लेकिन इस इत्तेफ़ाक़ के बावजूद नमाज़ को लेकर उम्मत में जितने ज़्यादा झगड़े होते हैं वह और भी ज़्यादा हैरत में डालने वाले हैं।

सै० अबुल आला मौदूदी रह० इस चिन्ताजनक स्थिति का जिक्र इन अल्फाज़ में करते हैं, नौबत यह आ गयी है कि लोग नमाज़ की जिस सूरत के आदी हैं, उससे ज़रा भी मुख्तलिफ़ सूरत भी जहां उन्होंने देखी और बस

वह समझने लगते हैं कि उस शख्स का दीन बदल गया है और यह हमारी उम्मत से निकल कर दूसरी उम्मत में जा मिला है। (रसायल व मसायल हिस्सा अव्वल पेज 165)

*अल्लाह के रसूल की नमाज़ :–*

हर मोमिन के दिल में ख़्वाहिश होती है कि उसकी पूरी ज़िन्दगी और उसकी सारी इबादतें अल्लाह के रसूल सल्ल० के तरीक़े के मुताबिक हों। इबादतों में नमाज़ सबसे अफज़ल है इसलिये नमाज़ के बारे में यह ख्वाहिश है, जिसका ईमान जिस क़दर ज़्यादा मज़बूत होगा उसकी यह ख्वाहिश उसी क़दर ज़्यादा होगी। हम यक़ीन के साथ कह सकते हैं कि सहाबा रज़ि० के दिल में यह ज़ज़्बा सबसे ज़्यादा रहा होगा, इसी तरह सहाबा के बाद दौरे अव्वल के मुसलमान इस ज़ज़्बे से बहुत ज़्यादा सराबोर रहे होंगे, बिला शुब्हा अव्वल दौर के मुसलमानों में सबसे ज़्यादा इहतिमाम इसी का होता होगा कि इनकी इबादतें और खास तौर से नमाज़े वैसी ही हों जैसी अल्लाह के रसूल सल्ल० ने पढ़ी थी और उम्मत को सिखाई थी।

हम यक़ीन के साथ यह भी कह सकते हैं कि अल्लाह के रसूल के ज़माने में उस वक्त की पूरी उम्मत को नमाज़ अपनी सारी जुज़्यात के साथ अच्छी तरह याद हो गयी थी, ठीक वही नमाज़ जो अल्लाह के रसूल पढ़ा करते थे।

नमाज़ एक सरल और छोटी सी सरगर्मी है जिसे ज्यों का त्यों याद कर लेना बहुत आसान काम है, खास तौर से अगर उसकी रोज़ाना कई दफा दोहराया भी जाता हो, इसलिये यक़ीनन नमाज़ को उसकी असली शक्ल में याद कर लेना उम्मत के लिये बेहद आसान रहा होगा। गोया जब हिफाज़त करना बहुत आसान हो, हिफाज़त करने के लिये बहुत लम्बा वक्त भी मिला हो, हिफाज़त करने की शदीद ताकीद भी है और हिफाज़त करने का सच्चा जज़्बा भी हो, और महफूज़ करना नजात और फ़लाह के लिये ज़रूरी भी हो, तो यक़ीन के साथ कहा जा सकता है कि तमाम सहाबा ने नमाज़ को सारी तफसीलात के साथ अच्छी तरह याद कर लिया होगा। और अपने बाद वाली उम्मत को अच्छी तरह याद करा दिया होगा। बल्कि नमाज़ तो अपनी असली शक्ल में उनकी ज़िन्दगी में खुशबू की तरह रच बस गयी होगी, और उनकी ज़िन्दगी का सबसे स्पष्ट रंग बन गयी होगी।

## *नमाज़ उम्मत को कैसे मिली ?*

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मदीना मुनव्वरा में दस साल तक रोज़ाना पांच मर्तबा फर्ज़ नमाज़ उम्मत के साथ जमाअत से अदा की, यानी तकरीबन अट्ठारह हज़ार मर्तबा सिर्फ मदीना मुनव्वरा में उम्मत को नमाज़ पढ़ाई, मक्का मुकर्रमा के तेरह साल इसके अलावा हैं। इसके बाद

लाख से ज़्यादा सहाबा कराम तकरीबन सौ साल तक पूरे आलमे इस्लाम में पूरी उम्मत को रोज़ाना पांच बार जमाअत से नमाज़ पढ़कर और यक़ीनन रसूल के तरीक़े पर नमाज़ पढ़ना सिखाते रहे, यह वह सिलसिला है जिससे उम्मत को नमाज़ मिली।

हज को भी उम्मत ने अल्लाह के रसूल को करते हुये देखा लेकिन सिर्फ़ एक बार और अच्छी तरह याद कर लिया जबकि नमाज़ को पूरी उम्मत ने अल्लाह के रसूल को सालों साल रोज़ाना पढ़ते हुये देखा, और उन देखने वालों को नये आने वाले लगातार रोज़ाना देखते रहे। मानो कि उम्मत को नमाज़ हक़ीक़ी सिलिसिले के साथ मिली और आंखो से देखकर मिली। उम्मत ने सिर्फ रिवायत करने वालों से सुना नहीं कि अल्लाह के रसूल नमाज़ कैसे पढ़ते थे बल्कि उससे पहले और उससे बहुत बड़े पैमाने पर उम्मत ने अल्लाह के रसूल को नमाज़ पढ़ते देखा और उन लोगों को नमाज़ पढ़ते देखा जो ठीक-ठीक अल्लाह के रसूल के तरीक़े के मुताबिक नमाज़ पढ़ते थे।

### *एक लाख सहाबा ने उम्मत को नमाज़ सिखाई :*

नमाज़ के मामले को आसान तरीन तरीके से यूं भी समझा जा सकता है कि इतिहासकारों के बक़ौल अल्लाह के रसूल सल्ल० की वफ़ात से पहले सहाबा रज़ि० की तादाद एक लाख से ज़्यादा थी। हमको तमाम सहाबा के बारे में

नेक गुमान रखना चाहिये कि उन्होंने अल्लाह के रसूल और बड़े सहाबा से नमाज़े पढ़ने का तरीक़ा तो ज़रूर सीखा होगा क्योंकि यह इस्लाम में दाख़िल होने के बाद सबसे ज़रूरी अमल था, और उस पर अल्लाह के रसूल सल्ल० के बताये हुये तरीके के मुताबिक़ अमल करना ज़रूरी था। अगर हम यह मान लें कि एक लाख सहाबा को अल्लाह के रसूल सल्ल० के तरीक़े के अनुसार नमाज़ पढ़ते हुये कम से कम उनकी औलाद ने तो खूब अच्छी तरह देखा होगा और खूब अच्छी तरह उनसे सीखा होगा, तो उसका मतलब यह है कि एक लाख सहाबा के बाद उनकी लाखों की तादाद में औलाद की नमाजें अल्लाह के रसूल के तरीक़े के मुताबिक थीं जबकि उससे आगे बढ़कर हमारा यक़ीन है कि सहाबा की उम्मत से तो उनकी ज़िन्दगी में नये ईमान लाने वाले लाखों मुसलमानों ने नमाज़ का तरीका ज़रूर सीखा होगा।

मुस्तदरक हाकिम की सही रिवायत है जिसमें रावी कहता है कि मैंने मुतमिर को कहते सुना कि मैं अपने अब्बा जान जैसी नमाज़ पढ़ने में कोई कसर नहीं छोड़ता हूँ, और मेरे अब्बा जान कहते थे कि मैं अनस बिन मालिक जैसी नमाज़ पढ़ने में कोई कसर नहीं छोड़ता हूँ, और अनस बिन मालिक कहते थे कि मैं अल्लाह के रसूल जैसी नमाज़ पढ़ने में कोई कसर नहीं उठा रखता हूँ, अपने बुजुर्गों से नमाज़ सीखना और अच्छी तरह सीखना और इसमें कोई कोताही

न बरतना, और अपनी औलाद और अपने शाग़िर्दों को इहतिमाम के साथ नमाज़ सिखाना और उनका शौक और लगन के साथ सीखना और उसकी पाबन्दी करना, यह तो हमारे इस गये गुज़रे दौर में भी आम है, इस दौर में तो यह रुझान अपने चरमसीमा पर रहा होगा।

### *नमाज़ के इख्तिलाफ़ात की हक़ीक़त :–*

सवाल पैदा होता है कि अगर इतने अज़ीम सिलसिले के साथ नमाज़ उम्मत को मिली है, तो फिर लोगों की नमाज़ों में इतना ज़्यादा इख्तिलाफ़ क्यों है ? इस सवाल का जवाब यह है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने उम्मत को हमेशा एक तरह से अन्जाम देना ज़रूरी था, और उनमें तुनू (अलग–अलग क़िस्म का) की कोई गुन्जाइश नहीं थी, जैसे दोबार सजदा करना, और एक बार रुकूअ करना, फज्र में दो रकअतें और मग़रिब में तीन रकअतें पढ़ना। इस तरह के आमाल अल्लाह के रसूल ने हमेशा एक तरह से अन्जाम दिया, और एक तरह से अन्जाम देना उम्मत ने सीखा और सिखाया और उम्मत उनको सदियों से एक ही तरह से अन्जाम देती आ रही है।

इनके अलावा नमाज़ के कुछ आमाल ऐसे थे, जिनमें तुनू की गुन्जाइश थी, उनको अल्लाह के रसूल सल्ल० ने एक से ज़ायद तरीक़े से अन्जाम दिया, और उम्मत ने भी एक से ज़ायद तरह से अन्जाम देना सीखा। चुनांचे हर

मुसलमान के लिये गुन्जाइश थी कि वह जब चाहे नमाज़ के इन मसनून तरीक़ों में से आवाज़ के साथ कह दे और जब चाहे बिला आवाज़ के कहे, यह गुन्जाइश नहीं रखी कि तशहुद कोई आवाज के साथ पढ़े और कोई बिना आवाज़ के। लेकिन खुद तशहुद कई तरह के सिखाये, कि जिसका जी चाहे वह कोई एक तशहुद पढ़ ले।

शुरू में तो सब लोग सब तरह से नमाज़ पढ़ते थे, फिर जब अल्लाह के रसूल के ज़माने के बाद मुसलमान बड़े-बड़े इलाकों में फैल गये तो यह तरीक़े भी फैल गये और इस तरह फैले कि किसी इलाके में किसी तरीक़े को ज़्यादा रवाज मिला तो किसी इलाके में दूसरे तरीके को प्रचलन मिला, लेकिन यह सब तरीके वही थे जिनको अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अन्जाम दिया था या जिनकी इजाज़त दी थी। जिस तरह अल्लाह के रसूल सल्ल० के ज़माने में क़ुरआन मजीद मदीना के अन्दर अलग-अलग क़िरअतों के साथ पढ़ा जाता था, लेकिन कुछ ही अन्तराल के बाद अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग किरअतें प्रचलित हो गयीं, और खुद मदीना में किसी एक किरअत को खास रिवाज मिला और बाकी क़िरअतों से आम लोग अपरचित हो गये।

जब फिक़ह (इस्लामी क़ानून) की संकलन का ज़माना आया और इस काम के लिये फुक़हा (इस्लामी

क़ानूनदां) सामने आये, और दूसरे मसायल के साथ नमाज़ के तरीक़े का भी और संकलन किया गया, तो हर फक़ीह ने अपने इलाके में रायज नमाज़ के तरीके को इख्तियार करके उस संग्रह में शामिल किया। इस तरह उम्मत में नमाज़ों के तरीक़ों के सारे आपसी फ़र्क़ संकलित कर दिये गये।

तरीक़ों के फ़र्क़ या इख़्तिलाफ़ की अस्ल हक़ीक़त तो यह थी कि सब अल्लाह के रसूल के सिखाये हुये और पसन्द किये हुये तरीक़े थे, और एक मुसलमान के लिए इसकी पूरी गुन्जाइश थी कि वह जब चाहे नमाज़ के जिए तरीके पर भी अमल करले। लेकिन बाद के लोगों ने इन्हीं तरीकों में से अपने या अपने इमामों के पसन्द किये हुये तरीक़ों को ज़्यादा अहमीयत देनी शुरू कर दी।

अपने-अपने तरीक़े को अफ़जल और राजेह (बेहतर) क़रार देने के लिए आमतौर से अल्लाह के रसूल से उल्लिखित हदीसों और सहाबा व ताबिईन से वर्णित आसार को दलील बनाया गया और एक ज़बरदस्त हक़ीक़त परदे के पीछे चली गयी कि नमाज़ के यह सारे तरीक़े उम्मत को ''अमली तवातुर'' के ज़रीये मिले हैं। अगर यह हक़ीक़त जेह्नों में ताजा रहती तो नमाज़ के मुख्तलिफ तरीके इख्तिलाफ़ का सबब नहीं बनाये जाते।

## *''अमली तवातुर'' क्या है ?*

अल्लाह के रसूल सल्ल० को एक लाख सहाबा ने

नमाज़ पढ़ते हुये देखा, और आपकी तरह खुद नमाज़ पढ़ी, फिर सहाबा के बाद वाली लाखों पर आधारित दूसरी जनरेशन ने सहाबा को अल्लाह के रसूल की तरह नमाज़ पढ़ते हुये देखा और वैसे ही नमाज़ पढ़ी, इसी तरह तीसरी जनरेशन ने किया, इस दौरान फ़कीहों का ज़माना आया और उन्होंने इस नमाज़ की बाक़ायदा फिक़्ही तदवीन कर दी। यही वह अज़ीम अमली तवातुर है जिसके रास्ते से उम्मत को अल्लाह के रसूल सल्ल० की नमाज़ मिली।

उसूले फ़िक़्ह की मशहूर किताब उसूलुश्शामी में ''अमली तवातुर'' की परिभाषा यूं की गयी है, ''मुतावातिर'' वह है जिसे किसी एक गिरोह ने एक दूसरे गिरोह से लेकर मुन्तकिल किया हो, इस तरह कि यह भी नहीं तसव्वुर किया जा सकता हो कि इतनी बड़ी तादाद झूठ पर जमा हो जायेगी और यह सिलसिला इसी तरह तुम तक पहुँचे, मिसाल के तौर पर जैसे क़ुरआन मजीद को, रकअतों की तादाद को और ज़कात की मिकदार को नक़ल किया गया।

## *''अमली तवातुर'' की वैकल्पिक व्याख्यायें–*

''अमली तवातुर'' के लिए फ़ुक़हा एक लफ्ज़ ''तवारुस'' का इस्तेमाल करते हैं ''तवारुस'' का मतलब वह अमल है जो नस्ल दरनस्ल मुन्तक़िल होता आया है। मिसाल के तौर पर तशहुद को बिना आवाज़ के पढ़ना शरई

तौर पर मतलूब समझा गया है, इसकी दलील बयान करते हुये हनफ़ी फक़ीह अल्लाह सरखसी लिखते हैं– अल्लाह के रसूल सल्ल० से यह बात नकल की गयी है कि ''तशहुद'' को आवाज़ के साथ पढ़ना है और लोग अल्लाह के रसूल सल्ल० के ज़माने से आज तक ''तशहुद'' को नस्ल दर नस्ल बिना आवाज़ के पढ़ते आये हैं, और तवारुस तवातुर की तरह है।

बहुत सारे फ़ुक़हा (इस्लामी क़ानूनदां) अमली तवातुर के लिये ''नक़्लुल ख़लफ़ अनिस्सलफ़'' की तावीर भी इस्तेमाल करते हैं, मतलब यह है कि वह अमल जो अगलों से पिछलों में मुन्तक़िल होता आया है। फर्ज़ नमाज़ों की क़िरत के सिलसिले में पूरी उम्मत का मोक़िफ़ यह है कि फज्र की दोनों रकअतों में और मग़रिब और इशा की पहली दो रक़अतों में इमाम को आवाज़ के साथ क़िरत करना है, जबकि बाक़ी रक़अतों में ज़ुहर और अस्र की तमाम रक़अतों के बिना आवाज़ के क़िरत करना है। खास बात यह है कि तमाम फ़ुक़हा बल्कि सारी उम्मत का इस पर इत्तेफाक़ है, मगर इसकी पुश्त पर कोई स्पष्ट दलील और सही हदीस मौजूद नहीं है। जिन रिवायतों को बयान किया जाता है वह या तो स्पष्ट नहीं है या फिर सही नहीं हैं। यही वजह है कि आमतौर से फ़ुक़हा इस मसले की दलील में ''अमली तवातुर'' को पेश करते हैं।

शाफ़िई मसलक के बड़े फ़क़ीह अल्लामा शीराजी लिखते हैं ''इमाम के लिये मुस्तहब है कि सुबह में और मग़रिब और इशा की पहली दो रकअतों में जहरी (बुलन्द आवाज) क़िरअत करें, इसकी दलील यह है कि अगलों से पिछलों ने यही नक़ल किया है। आगे लिखते हैं ''ज़ुहर और अस्र और मग़रिब की तीसरी रकअत और इशा की आखिरी दोनों रकअतों में सिरी (खामोशी) किरअत करे। क्योंकि अगलों से पिछलों ने यही नक़ल किया है।

### *इमाम मालिक ''अमली तवातुर'' के अलमबरदार–*

यूं तो नमाज़ तमाम फ़ुक़हा (इस्लामी धर्मशास्त्र के विद्वान) तक अमली तवातुर के साथ पहुँची फिर भी इमाम मालिक ने अमली तवातुर की इस दलील को ज़्यादा उजागर करके पेश किया। इमाम मालिक के उस्ताद रबीआ अपने दौर के इमाम थे, वह इल्म और शऊर में इस क़दर मुम्ताज थे कि रबीआ तुराई के नाम से मशहूर हो गये थे, उनका एक जुमला इमाम मालिक की फिक़्ह की बुनियाद क़रार पाया, उनका कहना था, एक हज़ार आदमियों को एक हज़ार आदमियों से कोई बात मिले तो यह इससे बेहतर है कि एक आदमी को एक एक आदमी से कोई बात मिले– अरबी.....इस तरह उन्होंने ''अमली तवातुर'' और ''क़ौली रिवायत'' के दरम्यान फ़र्क नुमायां कर दिया। इमाम मालिक के यहां इसकी अहमीयत बहुत ज़्यादा थी, कि

उन्होंने अपने ज़माने और अपने से पहले ज़माने के लोगों को क्या करते हुये पाया। चुनांचे जब उनसे अज़ान और इक़ामत के अलफाज़ को दो-दो बार कहने के सिलसिले में पूछा गया तो उन्होंने जवाब दिया अज़ान व इक़ामत के सिलसिले में मेरे पास वही बात पहुंची है जिस पर मैंने लोगों को अमल करते हुये, तो इक़ामत का मामला यह है कि इसके अलफाज़ को दो बार नहीं कहा जायेगा, इस पर अब तक हमारे शहर में अहले इल्म का अमल ज़ारी है।

### *अमली तवातुर के सिलसिले में एक शुब्हे का ख़ातमा-*

इस मौक़े पर कोई सवाल कर सकता है कि ''अमली तवातुर'' की दलील सिर्फ फर्ज़ नमाज़ के तरीक़े के लिये खास है, या शरीअत के तमाम मसायल में यह माना जा सकता है कि फ़कीहों ने जो भी राय इख्तियार की वह ''अमली तवातुर'' की बुनियाद पर इख्तियार की ।

इसका जवाब यह है कि ''अमली तवातुर'' उन मसलों में ज़ाहिर होता है जो हर खास व आम को बार-बार दरपेश होते हैं, जो मसायल कभी कभार पेश आते हैं, इनमें ''अमली तवातुर'' का इम्कान बहुत कम होता है। खास व आम को बार-बार पेश आने वाले मसायल बहुत सारे हो सकते हैं जैसे अज़ान का मसला है, जो बिला तफ़रीक़ सब लोग ज़िन्दगी भर सुबह से शाम तक बार-बार सुनते रहते

हैं। तकबीर, तशरीक के बारे में भी फ़ुक़हा यही कहते हैं कि अय्यामे तशरीक में हर फर्ज़ नमाज़ के बाद तकबीर कहना अमली तवातुर से साबित है, पूरी दुनिया में हर दौर में तमाम मुसलमान जब भी अय्यामे तशरीक में आते हैं यह तकबीर कहते रहे हैं।

अलबत्ता जो मसायल कभी-कभी पेश आते हैं और कुछ खास लोगों को ही पेश आते हैं, उनमें अमली तवातुर का हवाला फ़ुक़हा भी नहीं देते हैं, जैसे इस्लामी सज़ाओं का मामला है।

बार-बार पेश आने वाले मामलात में फर्ज नमाज़ का मामला सबसे नुमायां और मुम्ताज़ है कि यह तो दीन का सुतून है, और इसको तो बहुत सख्ती के साथ वैसे ही अन्जाम देता है जिसे अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अंजाम दिया, और बिना किसी अपवाद सबको अंजाम देना है।

***मसनून नमाज़ के एक से ज़्यादा तरीक़े हो सकते हैं-***

आम आदमी को यह समझने में परेशानी होती है कि नमाज़ के एक ही अमल को अलग-अलग मसलक के लोग अलग-अलग तरीके से अदा करते हैं, और हर कोई यह समझता और यक़ीन रखता है कि मेरा तरीका सुन्नत के मुताबिक है, आखिर उस मसले की हक़ीक़त क्या है ? सारे अलग-अलग अमल केसे रसूले खुदा की सुन्नत के मुताबिक़ हो सकते हैं? और अगर इनमें से कोई एक सुन्नत

के मुताबिक़ है तो फिर दौरे अव्वल ही में सुन्नत के खिलाफ़ बहुत सारे अमल नमाज़ में कैसे दाखिल हो गये और कैसे प्रचलित हो गये कि बड़े-बड़े इमाम यह नहीं समझ सके कि नमाज़ के कौन-कौन से अमल सुन्नत के मुताबिक़ हैं और कौन सुन्नत के मुताबिक़ नहीं हैं।

इमाम नववी रह० ने उसका एक जवाब दिया है ''नबी सल्ल० की नमाज़ के मुखतलिफ से दुआ करती थीं, कभी आप यह तरीक़ा इख्तियार फ़रमाते थे तो कभी वह तरीका इख्तियार कर लेते थे। जैसे कभी किरअत लम्बी करते थे तो कभी छोटी करते थे, और कभी उसकी दूसरी शकलें इख्तियार करते थे। इसी तरह वुजू में अंगों को एक-एक बार तो कभी दो दो बार तो कभी तीन तीन बार धोया और कभी तवाफ़ यानी खानये काबा की सवारी पर किया तो कभी पैदल किया, वित्र शुरू रात में भी पढ़ी और रात के आखिरी हिस्से में भी पढ़ी और दरम्यानी रात में भी पढ़ी और कभी विव्र फज्र तक भी हो गयी, इसके अलावा भी आप सल्ल० के बहुत सारे अहवाल हैं जैसा कि हमारे इल्म में है। मज़ीद वहां आप सल्ल० कभी इबादत को दो तरह से या कई तरह से अन्जाम देते थे, ताकि एक मर्तबे या कुछ मर्तबे करके बता दें कि इसकी भी रुखसत और इजाज़त है और जो अफज़ल होता इस पर पाबन्दी से अमल फ़रमाते कि यह पसन्दीदा है और ज़्यादा बेहतर है।

इस क़ीमती गुफ्तगू पर यह और कहा जा सकता है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० एक अमल को अलग-अलग तरीक़ों से अंजाम दिया करते थे, कभी यह बताने के लिये कि इनमें से एक अमल जाइज़ है और एक अमल अफज़ल है। और कभी यह बताने के लिये कि यह सारे तरीक़े बराबर से फ़ज़ीलत वाले हैं और सारे तरीक़ों में खूबी और खूबसूरती है। अगर उम्मत में सारे तरीक़े भरपूर ''अमली तवातुर'' के साथ मुन्तक़ल हों और अल्लाह के रसूल से किसी एक के सिर्फ जाइज़ और दूसरे के अफज़ल होने की सराहत साबित न हो तो मान लेना चाहिये कि सारे तरीक़े अल्लाह के रसूल सल्ल० ने बराबर से फज़ीलत के साथ उम्मत को सिखाये और फिर उन सब को अफज़ल और सुन्नत मान लेना चाहिये।

## *दुआये क़ुनूत का वक़्त और हज़रत अनस रज़ि० का बयान-*

इस बात पर हैरानी नहीं होना चाहिये कि एक ही काम के दो अलग-अलग तरीक़े सुन्नत कैसे हो सकते हैं? हक़ीक़त यह है कि नमाज़ के जिन आमाल को अल्लाह के रसूल सल्ल० ने अलग-अलग तरह से अन्ज़ाम दिया, उम्मत में वह सारे अलग-अलग तरीके सुन्नत के तौर पर मुन्तक़िल हुये। सहाबा रज़ि० से खुद इस बात की सराहत मिलती है, इसकी मिसाल दुआये क़ुनूत के पढ़ने के वक़्त

की है, दुआये क़ुनूत के पढ़ने के सिलसिले में दो मोकिफ़ बतौर सुन्नत राइज हुये, एक यह कि दुआये कुनूत रुकूअ से पहले पढ़ी जाये और दूसरा यह कि रुकूअ के बाद पढ़ी जाये। मुख़्तलिफ़ सहाबा और ताबिईन से यह दोनों अमल वर्णित हैं, बल्कि इमाम इब्ने मुन्ज़िर ने जिन सहाबा के नाम ज़िक्र किये उनमें हज़रत उमर रज़ि० और हज़रत अली रज़ि० के नाम रुकूअ से पहले कुनूत पढ़ने वालों में भी ज़िक्र किये और रुकूअ के बाद पढ़ने वालों में भी ज़िक्र किये, यह देखकर जो हैरत हुयी, वह हज़रत अनस बिन मालिक के एक बयान से दूर हो गया, यह बयान हमारे बहुत सारे मसायल में रहनुमाई करता है, अनस बिन मालिक से पूछा गया कि क़ुनूत रुकूअ से पहले है या रुकूअ के बाद है ? उन्होंने कहा, ''हम इन सब तरीक़ों पर अमल किया करते थे'' अरबी.....(मुसनद सिराज रिवायत नं. 1350–शेख अलबानी और दूसरे मुहक़्क़ीन ने रिवायत को सही करार दिया है)

सुनन इब्ने माजा की रिवायत के अल्फाज़ यूं हैं, अनस बिन मालिक से सुबह की नमाज़ में क़ुनूत के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा, हम रुकूअ से पहले भी कुनूत पढ़ते थे और रुकूअ के बाद भी। अरबी.....

इसमें कौन शक कर सकता है कि हज़रत अनस और दूसरे सहाबा यह सब इसलिये करते रहे होंगे कि

अल्लाह के रसूल से उन्होंने यही सीखा और यही करते हुये देखा होगा। दरअस्ल यही हक़ीक़त है नमाज़ के उन सब आमाल की जिनके सिलसिले में एक से ज़्यादा तरीक़े उम्मत में रायज हुये है, कि अल्लाह के रसूल इन आमाल को कई तरह से अन्जाम दिया करते थे और सहाबा रज़ि० भी कई तरह किया करते थे, और फिर उम्मत में वह सब तरीक़े अलग-अलग इलाक़ों और जमाअतों में रिवाज पा गये।

### *नमाज़ का तरीक़ा और हदीसें व रिवायतें-*

नमाज़ के अलग-अलग तरीक़ों का तज़्किरा अनेक रावियों ने किया यह तज़्किरों की हैसीयत कौली रिवायत की है, कौली रिवायतों में ''तवातुर'' कहीं कहीं ही मिलता है, ज़्यादातर अखबार आहाद (  ) हैं जिनमें कुछ रिवायतें सही ज़रिये से पहुँची हैं और कुछ कमज़ोर ज़रीये से, फिर भी जो हक़ीक़त ज़ेहन नशीन रहनी चाहिये वह यह कि उम्मत ने नमाज़ पढ़नी इन क़ौली रिवायतों से नहीं सीखी बल्कि उन रिवायतों से पहले और उन रिवायतों के बग़ैर सीखी और उन मुतावातिर अमली रिवायतों के ज़रीये सीखी, जिनकी हैसीयत मुतावातिर अमली सुन्नत की है, कौली रिवायतें तो अकसर एक रावी से या एक दो रावियों तक पहुँची, मगर नमाज़ सारी उम्मत से सारी उम्मत तक पहुँची, गोया उम्मत ने नमाज़ रावियों से नहीं सीखी बल्कि नमाज़ियों से सीखी जिनमें यह रावी भी शामिल थे।

जब हम नमाज़ के मुख्तलिफ़ आमाल का जाइज़ा लेते हैं तो मुख्तलिफ सूरतें सामने आती हैं, बाज़ आमाल वह हैं जिनके सिलसिले में रिवायतें भी आई हैं और अमली तवातुर भी मौजूद रहा है, सारी रिवायतें बड़े आला दर्जे की हैं और अमली तवातुर तो है ही निहायत आला दर्जे की दलील जैसे बाज़ आमाल वह हैं जिनके सिलसलि में रिवायतें नहीं हैं या हैं तो बहुत ही कमज़ोर हैं अलबत्ता अमली तवातुर है, जैसे रुकूअ के बाद खड़े होने पर हाथ कहा रखे जायें ? औरतों के सजदे की शक्ल क्या हो?

बाज़ आमाल वह है जिनके सिलसिले में रिवायतें है लेकिन इनमें ज़रा सी कमज़ोरी है, या यह कि वह खुद मुहद्दिसीन के यहां प्रचलित नहीं हैं, फिर भी अमली तवातुर मौजूद हैं, जैसे हालते क़ियाम में हाथ कहां रखे जायें। गर्ज़ यह कि रिवायतों का दरजा मुख्तलिफ हो सकता है, किसी अमल के सिलसिले में तवातुर रिवायतें मिल जाती हैं और किसी अमल के सिलसिले में मुतावातिर रिवायतें नहीं मिलती है, किसी अमल के हक़ में सही रिवायतें मिलती हैं और किसी अमल में कमज़ोर रिवायतें मिलती हैं, लेकिन एक हक़ीक़त हमेशा पेशेनज़र रखनी चाहिये वह यह कि अज़ीम फुक़हा ने अपने ज़माने में उम्मत को नमाज़ के मुख्तलिफ़ आमाल अंजाम देते हुये देखा, और उनमें से जो तरीक़ा उनको ज़्यादा पसन्द आया उस को इख्तियार किया,

उनके ज़माने में उम्मत में जो तरीक़े राइज थे, वह दरअस्ल अमली तवातुर के साथ उनके ज़माने तक पहुँचे थे।

इस हक़ीक़त को समझ लेने के बाद हमारा रवइया नमाज़ के ताल्लुक़ से रिवायतों के बारे में तबदील होना चाहिये, हम यह न समझें कि नमाज़ बस जो रिवायतों में उल्लिखित है, बल्कि नमाज़ तो पहले नम्बर पर वह है जो उम्मत ने उम्मत के अमल से सीखी, यानी जो कुछ सही रिवायतों में है वह तो दुरूस्त है, साथ ही जो रिवायतों में नहीं है मगर उम्मत ने उम्मत के अमल से सीखी है वह भी दुरुस्त है।

सही रिवायतें सर आंखों पर, मगर उनका हवाला देकर उम्मत के अमल से आई हुई नमाज़ को ग़लत कहना सही नहीं है। हमारा रवइया यह होना चाहिये कि रफ़यदैन (रुकूअ से पहले और बाद में हाथ उठाना) भी ''अमली तवातुर'' से साबित है और रफ़यदैन न करना भी अमली तवातुर से साबित है। दोनों अमल सुन्नत के मुताबिक हैं, इत्तेफाक से एक अमल के हक़ में बहुत ज़्यादा रिवायतें हैं और एक के हक़ में कम रिवायतें हैं, अगर दोनों में से किसी एक के ह़क में कोई रिवायत नहीं होती तब भी यह नहीं माना जा सकता कि उनका अमल सुन्नत से हट कर है, क्योंकि उनके अमल की पुश्त पर अमली तवातुर की ज़बरदस्त दलील मौजूद होती है।

याद रहे, हमारा मकसद अमली तवातुर का हवाला देकर हदीस की अहमीयत को घटाना नहीं है, बल्कि एक ऐसा रास्ता याद दिलाना है, जिसमें तमाम सही रिवायतों पर अमल मुम्किन हो जाता है, न किसी को मरजूह (कम बेहतर) और काबिले रद्द क़रार देना पड़ता है, न किसी को मंसूख (निरस्त) कह कर नाक़ाबिले तवज्जो बनाना होता है।

***नमाज़ के कुछ एहकाम सिर्फ ''अमली तवातुर'' से साबित हैं–***

यूं तो नमाज़ के तमाम आमाल की अस्ल दलील ''अमली तवातुर'' है, यह अलग बात है कि इन आमाल के बारे में मुख्तलिफ दर्जे की रिवायतें भी मौजूद हैं, फिर भी बाज़ आमाल के सिलसिले में तो बहुत स्पष्ट हो जाता है कि उनकी पुश्त पर सिर्फ अमली तवातुर की दलील है। क्यों कि या तो कोई रिवायत इस सिलसिले में मिलती नहीं है या मिलती है तो कमज़ोर होती है, और अगर किसी दर्जे में सही या हसन होती और ये तो इतनी दूर दराज़ होती है, यह नहीं माना जा सकता है कि सारी उम्मत ने नमाज़ का वह अमल खास इस रिवायत से सीखा होगा, जैसे रुकूअ और सजदे की तस्बीहात सारे लोग हर नमाज़ में बिना आवाज़ के पढ़ते हैं, तशहुद बिना आवाज के पढ़ा जाता है, दरूद भी बिना आवाज़ के पढ़ते हैं, आवाज़ से पढ़ी जाने वाली नमाज़ों में दो रक़अत के बाद वाली रकअतों में किरात

बिना आवाज़ के होती है। रुकूअ से पहले हाथ कहां बांधे जायें, रुकूअ से पहले हाथ बांध कर खड़े होने वाले रुकूअ के बाद हाथ छोड़कर खड़े होते हैं। यह सारे आमाल वह हैं जिनकी दलीलों को तलाश करने निकले तो सारी तहक़ीक़ और जुस्तजू के बाद इत्मीनान इसी पर होता है कि इन आमाल की अस्ल दलील अमली तवातुर है, इस दलील के बगैर इतनी बड़ी उम्मत समान तरीक़े से उन आमाल को अंजाम नहीं दे सकती थी।

### *फिक़्ह के इमामों ने प्रचलित नमाज़ की तदवीन की–*

फिक़्ह के इमामों ने उम्मत को नमाज़ पढ़नी नहीं सिखाई बल्कि अपने वक्त की उम्मत से नमाज़ पढ़नी सीखी, इस यक़ीन के साथ कि यही अल्लाह के रसूल की नमाज़ है, और उसी तरीक़े की तदवीन की। हर इमाम ने जब शऊर की उम्र को पहुँच कर आंखों से देखा तो अपने शहर के लोगों को नमाज़ पढ़ते हुये पाया और इस यक़ीन के साथ नमाज़ पढ़ते हुये पाया कि इनकी नमाज़ बिल्कुल दुरुस्त है और तरीक़ा रसूल के मुताबिक है।

कभी–कभी लोगों की गुफ्तगू से ऐसा महसूस होता है कि इमाम अबू हनीफ़ा इमाम मालिक और इमाम शाफ़िई के ज़माने में उम्मत को नमाज़ पढ़नी नहीं आती थी, इसलिये हर इमाम ने अपने पास मौजूद दलीलों की रोशनी में नमाज़ का तरीका उम्मत के सामने पेश किया। यह तसव्वुर दुरुस्त

नहीं है, इमामों का ज़माना तो बहुत बाद का है, उम्मत तो उनसे पहले भी बड़ी इत्मीनान के साथ रोज़ाना नमाज़ पढ़ती थी और पूरी उम्मत नमाज़ के मुख्तलिफ तरीक़ों के बारे में यह यकीन रखती थी कि यह सब तरीके दुरुस्त हैं और सुन्नते रसूल के मुताबिक हैं। उनके दरम्यान नमाज़ के तरीकों को लेकर न कोई बेइत्मीनानी थी, न कोई आपस में झगड़ा था।

इस दौर के इमामों और फक़ीहों ने नमाज़ के बारे में यह काम ज़रूर किया नमाज़ के प्रचलित तरीकों को रिवार्ड कर लिया। चूंकि उन्होंने इस फिक़ह की तदवीन का बीड़ा उठाया था जो लोगों की प्रकटिस में तो थी अभी उसकी बाक़ाइदा तदवीन का अमल पूरा न हुआ था, और यूं नमाज़ के सारे तरीक़े और तदवीन के अमल में शामिल हो गये।

इमामों का काम उम्मत को नमाज़ सिखाना था ही नहीं उनका अस्ल काम तो नये-नये मसायल में उम्मत की रहनुमाई करनी थी। लोग उनके पास नमाज़ का तरीक़ा पूछने जाते थे क्योंकि नमाज़ का तरीक़ा तो उनके ज़माने में बच्चे-बच्चे को आता था। इमाम अबू हनीफ़ा रह० की खासीयत तो यह नही है कि उन्होंने कोई खास तरीकये नमाज़ इख्तियार किया, उनकी खुसूसीयत तो यह है कि बदलते हुये हालात में नये-नये मसायल में उम्मत की रहनुमाई की, यही खुसूसीयत इमाम मालिक रह०, इमाम

शाफ़िई रह० और इमाम अहमद बिन हम्बल रह० का और दूसरे फकीहों का था।

यूं भी नमाज़ इज्तिहाद का मैदान तो है नहीं, इसे तो बिल्कुल वैसे ही पढ़ना चाहिये जैसे अल्लाह के रसूल ने पढ़ कर दिखाया था, और उम्मत वैसे ही पढ़ती आई है, हमने बहुत बड़ी गलती की जब नमाज़ की किसी खास शक्ल को किसी इमाम की तरफ़ जोड़ दिया और उस इमाम के सारे पैरवी करने वालों से मांग की कि वह अपने इमाम की तरीके से नमाज़ पढ़े। यह हक़ीक़त स्पष्ट रहनी चाहिये कि जब नमाज़ में इज्तिहाद नहीं करना है तो फिर नमाज़ में तकलीद़ भी नहीं करनी है, क्योंकि तकलीद तो इज्तिहादी मसायल में होती है, दूसरे अल्फाज़ में जो कोई चाहे उम्मत में मौजूद किसी भी तरीके की नमाज़ पढ़ सकता है, इससे कतये नज़र कि वह इज्तिहादी मसायल में वह किस इमाम या मसलक का पैरो है।

हमें जानना चाहिये कि नमाज़ के जिन तरीक़ों को हम चारों इमामों में से किसी की तरफ मंसूब करते हैं, या उसी ज़माने के दूसरे इमामों की जानिब मंसूब करते हैं, वह दरअस्ल उस ज़माने की उस उम्मत का अमल होता है, और इमाम महज़ अपने वक्त की उम्मत का तर्जमान (प्रतिनिधि) होता है। शाह वली उल्लाह देहलवी रह० चौथी सदी तक के मुसलमानों के बारे में लिखते है–

''अवाम का मामला यह था, कि जो इज्माई मसायल (वह मसायल जिस पर सारे इमाम सहमत हों) मसायल होते है, जिनमें मुसलमानों या जमहूर मुजतहदीन के दरम्यान इख्तिलाफ नहीं होता, उनमें सिर्फ साहिबे शरीअत की पैरवी करते और वुज़ू व ग़ुस्ल की कैफ़ीयत और नमाज़ व जमात वगैरा के इहकाम अपने बुजुर्गों और शहर के आलिमों से सीख लेते, और उसी पर चलते और जब कोई नया मामला पेश आ जाता तो किसी भी मसलक का जो मुफ्ती मिल जाता उससे पूछ लेते''

***बाद के फकीहों ने वकालत का रास्ता अपनाया :–***

चूंकि पूरी उम्मत ने नमाज़ अल्लाह के रसूल से सीख कर अमली तवातुर के साथ बाद वाली उम्मत तक मुन्तक़िल की है, इसलिये होना तो यह चाहिये था कि नमाज़ को उसके सारे आपसी फ़र्क़ के साथ अपनी नमाज़ समझा जाता, लेकिन जब ग़लती से यह मान लिया गया कि नमाज़ की कोई एक खास सूरत है तो हमारी, हमारे इमाम की और हमारे मस्लक की है और बाकी सूरतें दूसरों की और दूसरों के इमामों और मसलकों की हैं, तो यहीं से बात खराब हो गयी। हर मसलक की वकालत करने वाले लोग सामने आ गये, उनका मक़सद यह होता कि अपने मसलक की हिमायत में कमज़ोर दलील को भी ताक़तवर बनाकर पेश करते और मुक़ाबिल की ताक़तवर दलीलों को भी कमज़ोर

या निरस्त करार दें। इसमें वह यह भूल जाते हैं कि उनकी यह वकालत अल्लाह के रसूल की स्पष्ट और सही तालीमात के सिलसिले में अदब की सीमाओं से लांघ रही है। अलबत्ता उन जानिब दार वकीलों के मुकाबले में बाज़ ईमानदार फुक़हा के नाम भी सामने आते हैं, जिनको मसलक के क़ौल से ज़्यादा शरीअत की दलील का इहतेराम और ख्याल रहता और वह बीच की राह की तलाश में रहते हैं।

## *इख्तिलाफ़े तुनूअ क्या है ?*

अगर किसी एक अमल को अन्जाम देने के एक से ज़्यादा तरीक़े हों और वह सब जाइज हों तो उनमें इख्तिलाफ़ सिर्फ इसका रह जाता है कि कौन अपनी पसन्द या समझ से किस तरीके को इख्तियार करता है, यह जाइज़ और नाजइज़ का इख्तिलाफ़ नहीं होता है बल्कि सिर्फ पसन्द और इख्तियार का इख्तिलाफ़ होता है, अपने आप में यह सब तरीक़े जाइज़ और शरीअत के मुताबिक़ होते है, इसको इख्तिलाफ़े मुनह भी कहते है, और इख्तिलाफ तुनूअ भी कहते हैं।

अल्लामा इबने तैमिया रह० ने इख्तिलाफ़ की दो किस्में बताई, एक ''तज़ाद'' (विरोध) का इख्तिलाफ़, और एक ''तुनूअ'' (तरह-तरह) का इख्तिलाफ़। तज़ाद के इख्तिलाफ़ की मिसाल यह है कि एक फ़रीक़ किसी चीज़ को

हराम क़रार दे और दूसरा उसी को वाजिब क़रार दे। तुनूअ के इख्तिलाफ़ की मिसाल किरअत है, सब किरअतें जाइज़ होती हैं, गोया कि कोई एक को इख्तियार कर लेता है और कोई दूसरी को इख्तियार कर लेता है।

एक बार हज़रत उमर और हज़रत हिशाम बिन हकीम के दरम्यान सूरह फ़ुरकान में इख्तिलाफ़ हो गया, एक ने एक तरीके से पढ़ा, और दूसरे ने दूसरे तरीके से पढ़ा। अल्लाह के रसूल सल्ल० ने दोनों से कहा कि जैसे तुमने पढ़ा इस तरह भी नाज़िल हुई है। इसकी दूसरी मिसाल तशहुद के अलफाज़ का इख्तिलाफ़ है, कि जो अल्फाज़ भी अल्लाह के रसूल सल्ल० से साबित हैं वह सब दुरुस्त है, और बेहतर हैं।

अल्लामा इब्ने तैमिया ने यह भी बताया कि एक से जायद सही तरीक़ो में एक फ़कीह किसी एक तरीक़े का इन्तिखाब क्यों करता है। या तो वह सिर्फ उसी एक तरीके से वाकिफ़ होता है या उस तरीक़े का आदी और उससे परिचित होता है। या उसके ख्याल में उसे राजेह (बेहतर) क़रार देने का कोई सबब होता है।

अल्लामा इब्ने तैमिया ने यह भी बताया कि इख्तिलाफ़े तुनूअ में कभी कोई एक फ़क़ीह दीगर तरीक़ों पर ना पसन्दीदगी का इज़हार करता है, क्योंकि इसको लगता है कि यह सुन्नत से साबित नहीं है, लेकिन उससे इस दूसरे

फ़क़ीह का यक़ीन तो आहत नहीं होता है जो जानता है कि यह भी सुन्नत है।

अल्लामा इब्ने तैमिया एक कतई उसूल बताते हैं कि किसी भी अमल के जितने तरीके अल्लाह के रसूल सल्ल० से साबित हों वह सब जाइज हैं और अगर लोग उनमें से अलग-अगलग तरीक़ों का इन्तिखाब करते हैं, तो यह इख्तिलाफ़े तुनूअ यानी अलग-अलग किस्मों का इख्तिलाफ़ है।

### *सै० सुलेमान नदवी की फ़िक्र अंगेज़ गुफ्तगू-*

अल्लामा सै० सुलेमान नदवी रह० ने सुन्नत और हदीस का फ़र्क़ बताते हुये ''अमली तवातुर'' पर बहुत ज़ोर देकर यह बात कही है कि नमाज़ उम्मत को अज़ीम अमली तवातुर के साथ मिली है, ग़ौर करने की बात यह है कि अल्लामा नदवी मुतावातिर अमली कैफीयत को ही सुन्नत क़रार देते हैं। अल्लामा लिखते हैं-

आज कल लोग आमतौर से हदीस व सुन्नत में फ़र्क़ नहीं करते और उसकी वजह से बड़ा धोखा होता है। हदीस तो हर उस रिवायत का नाम है जो ज़ाते नबवी के ताल्लुक से बयान की जाये, चाहे एक ही बार का वाकिया हो या एक ही शख्स ने बयान किया हो, मगर सुन्नत दरअस्ल ''अमले तवातुर'' का नाम है। यानी आप सल्ल० ने खुद अमल फ़रमाया, आपके बाद सहाबा रज़ि० ने किया फिर ताबिईन

(जिन्होंने सहाबा रज़ि० को देखा) ने किया, गोया यह ज़बानी रिवायत की हैसीयत से मुतावातिर नहीं मगर अमली तौर पर मुतावातिर (लगातार) है, इसी तरह यह बिल्कुल मुम्किन है कि एक वाक़िया रिवायत की हैसीयत से अलग तरीके से बयान किया गया हो, इसलिये वह मुतावातिर न हो, मगर इसकी आम अमली कैफीयत मुतावातिर हो, इस मुतावातिर अमली कैफीयत का नाम सुन्नत है।

मान लीजिए कि आप सल्ल० नमाज़ की फरज़ियत के बाद सारी उम्र दिन में पांच बार पढ़ते रहे, आपके बाद सहाबा रज़ि० का यही तरीक़ा रहा, यही ताबिईन का रहा और यही ज़मीन पर बसने वाले के तमाम मुसलमानों का रहा, उनका भी जो बुखारी व मुस्लिम के वजूद से पहले थे, और उनका भी जो उसके बाद पैदा हुये, तो आप सल्ल० की यह पांच वक्त की नमाज़ इस्तिलाही रिवायत मुतावतेरह से साबित हो या न हो, लेकिन अमली तवातुर से बिला शक व शुब्हा साबित है, तेरह सौ बरस से ज़ायद आज दुनिया के मुसलमान जिनके अक़ायद, आमाल, ख्यालात, इखलाक़, ज़बान, रहन-सहन, वतनीयत और ज़माना में बेहद इख्तिलाफ़ है फिर भी इस बात में सबका इत्तेफाक़ है कि आप सल्ल० और आपके साथी दिन में पांच दफ़ा नमाज़ पढ़ा करते थे, फ़लां-फ़लां अवकात में पढ़ा करते थे और

फ़लां-फ़लां अरकान के साथ पढ़ा करते थे, ये तवातुर अमली है, जिसका इनकार बड़ा गुनाह है।

कोई शख्स यह नहीं कह सकता कि पांच अवकात का निर्धारण और इस तरह नमाज़ का तरीक़ा बुखारी या मुस्लिम या अबु हनीफ़ा रह० और शाफ़िई रह० की वजह से मुसलमानों में रिवाज पाया है, हालांकि यह तो वह अमल है जो अगर बुखारी या मुस्लिम दुनिया में न भी होते तो भी वह इसी तरह अमली तौर पे साबित होती, अगर दुनिया में बिलफ़र्ज़ हदीस का एक सफा भी न होता तो वह इसी तरह ज़ारी रहती, हदीसों की तहरीर और सम्पादन ने इस तर्ज़अमल को नाकाबिले इन्कार तारीखी हैसीयत प्रदान कर दी, तो क्या फिर इस बिना पर कि इस अमली कैफीयत को दूसरी या तीसरी सदी के किसी मुहद्दिस (हदीस-ज्ञाता) ने अलफाज़ व तहरीर में क़लम बन्द कर दिया वह तवातुर हदे एतिबार से घिर गया।

### *इमाम इब्न अब्दुल बर की अहमतरीन गुफ्तगू :-*

''अमली तवातुर'' पर पुराने फ़क़ीहों में एक ज़बरदस्त और विस्तृत बयान इमाम इब्ने अब्दुल बर के यहां मिलता है। आप का शुमार चोटी के फक़ीहों में होता है, मालिकी मसलक के आप ज़बरदस्त तर्जमान (प्रतिनिधि) माने जाते हैं।

''तशह्हुद'' में क्या पढ़ा जाये, इस पर अल्लामा

इब्ने अब्दुल बर ने सारे कथनों और उनकी दलीलों को पेश किया और उसके बाद फ़रमाया, इन्शा अल्लाह यह सब अच्छे और खूब हैं.....। इसके बाद अल्लामा इब्ने अब्दुल बर ने हिकमत व बसीरत से भरपूर एक शानदार बयान दिया, यह बयान उनकी फिक़्ही बसीरत का आला नमूना है, वह लिखते हैं–

''तौफीक़ देने वाली अल्लाह की ज़ात है, मैं यह कहता हूँ कि इख्तिलाफ तशहुद का हो, अज़ान और इकामत का हो, जनाज़े की तकबीरों का हो, जनाज़े की नमाज़ में क्या पढ़ा जाये और क्या दुआ मांगी जाये इसका हो, ईदों की नमाज़ों में तकबीरों की तादाद का हो, नमाज़ के रुकूअ में हाथ उठाने का हो, नमाज़ जनाज़े की तकबीरों में हाथ उठाने का हो, नमाज़ के सलाम का हो कि एक सलाम या दो सलाम, नमाज़ में दाहिना हाथ बायें हाथ पर रखने हाथ यूं ही छोड़ देने का हो, क़ुनूत पढ़ने और न पढ़ने का हो, और इस तरह के सारे इख्तिलाफ़ दरअस्ल जाइज़ में इख्तिलाफ़ है। वैसे ही जैसे वज़ू में एक बार या दो बार या तीन–तीन बार करने का मामला है। फिर भी हिजाज़ ( ) और ईराक के फ़क़ीहों (इस्लामी क़ानूनदानों) और उनके मानने वाले जिनके फतवों पर अब लोगों का दारोमदार हो गया है वह नमाज़ जनाज़ा में चार तकबीरों से ज़्यादा पर ज़ोर देते हैं, और उसका इन्कार करते हैं। हालांकि इसकी

कोई वजह नहीं है, कोई सलफ़ तो सात और आठ बार छै और पांच, चार, तीन तकबीरें भी कहते हैं। इब्ने मसऊद ने तो कहा कि तुम्हारा इमाम जितनी तकबीरें कहे, उतनी तकबीरें तुम भी कहो, यही राय अहमद बिन हम्बल की भी थी। यही लोग यह भी कहते हैं कि वजू में तीन-तीन बार धोना एक-एक बार अच्छी तरह से होना अफज़ल है।

अल्लामा इब्ने अब्दुल बर ने इसके बाद ज़बरदस्त बात कही, और अमली तवातुर की ज़बरदस्त दलील पर से पर्दा उठाया, वह लिखते हैं- ''मैंने जिन जिन मसलों का तज़किरा किया है उन्हें दरअस्ल तमाम बाद वालों ने अमलों से नक़ल किया है, और नेक ताबिईन ने अपने बुज़ुर्गो से नक़ल किया है, और इस तरह नकल किया है कि उसके किसी ग़लती या भूल इमकान भी नहीं है, क्योंकि यह ज़ाहिर और नुमायां है, जिन पर आलमे इस्लाम के सारे इलाकों में अमल रहा है, और यह अमल ज़माना दर ज़माना रहा है, अवाम और ओलमा तमाम ही इसमें बराबर रहे हैं, और यह नबी सल्ल० के दौर से ज़ारी है। इससे मालूम हुआ कि यह सब जाइज़ है, और उनमें वुसअत और रहमत वाली गुन्जाइश है, और सारी तारीफ़े अल्लाह के लिये है''।

***अफज़ल अमल की पहल भी एतिदाल चाहती है-***

''अमली तवातुर'' और दूसरी रिवायात और आसार से जब एक ही मसले में दो तरीक़ों का सुन्नत होना

साबित हो जाये, तो उनमें से किसी एक को अफ़जल क़रार देने में इहतियात की भी ज़रूरत है एतिदाल की भी ज़रूरत है।

चार इमामों में कोई नमाज़ के किसी मसले में एक से ज़्यादा तरीक़ों में से किसी एक तरीक़े को ज़्यादा पसन्द करता है, तो उसकी वजह आम तौर से यह होती है कि उसने बचपन से इसी अमल को अपने बुजुर्गो और उस्तादों को करते हुये पाया, अपने इलाके में उसी अमल को राइज पाया, और उस अमल से उसको उन्सीयत ज़्यादा रही, इसमें कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि मुख्तलिफ़ इमाम जिन मुख्तलिफ़ तरीक़ो को उन्सीयत की बिना पर पसन्द करते थे, वह अमली तवातुर की रोशन और मजबूत दलील से साबित भी होते थे, लेकिन फ़िक़ह के इन इमामों को यह मालूम रहता था कि दूसरे तरीक़े भी सुन्नत के मुताबिक हैं, वह भी अमली तवातुर से साबित है, इसलिये वह भी काबिले इहतिराम है, शाह वली उल्लाह देहेलवी रह० चार इमामों के ज़माने के बारे में लिखते हैं–

''किसी मसले में जब सहाबा और ताबिईन के मसलक आपस में मुख्तलिफ़ होते तो हर आलिम का रूझान इसके इलाके वालों और उसके उस्तादों के मसलक की तरफ होता, क्योंकि वह यह ज़्यादा जानता कि उसके यहां प्रचलित कथनों में कौन सही है और कौन कमज़ोर है, और

उनके लिये मुनसिब उसूलों से उसकी वाकिफियत ज़्यादा होती और फिर उसका दिल भी उनके इल्म व फ़ज़्ल से ज़्यादा प्रभावित होता''

खुद अमल करने के लिये पसन्द की यह बुनियाद भी माक़ूल और मुनासिब है जिसका ज़िक्र शाह साहब ने किया है फिर भी बात उस वक्त खराब होती है जब बाद में आने वाले लोग अपने इमाम की इस पसन्द का इस क़दर प्रचार करते हैं, उस पर इस क़दर इसरार करते हैं और उसकी वकालत में इतनी दलीलें इकट्ठा करने की कोशिश करते हैं कि दूसरे मसलक की इज़्ज़त व फज़ीलत आहत होने लगती है।

हक़ीक़त में दोनों तरीक़े फ़ज़ीलत से मुत्तसिफ होते हैं, क्योंकि उनका सरचश्मा अल्लाह के रसूल सल्ल० की सुन्नत होती है, लेकिन उनमें से एक को अफज़ल क़रार देने में जब संतुलन सीमा से पार होता है, तो दसूरा ग़ैर अफ़जल लगने लगता है। और यह दरअस्ल सुन्नत के क़ाबिले इहतिराम सरचश्में के साथ ज़्यादती होती है, जहां से वह तरीक़ा उम्मत को मिला है।

अगर सारी तवज्जो इस पर केन्द्रित हो जाये कि हमारे इमाम साहब ने कुछ तरीक़ों में से किस तरीक़े को पसन्द किया था, और आदमी यह फ़रामोश कर दे कि वह सारे तरीक़े अल्लाह के रसूल सल्ल० के पसन्द किये हुये

और आपके बताये हुये थे, तो यह रवइया दुरुस्त नहीं होता और उसके नतीजे अच्छे नहीं निकलते।

### *उम्मत में मौजूद नमाज़ और उम्मत का इत्तेहाद :–*

नमाज़ के सिलसिले में बहुत सारे इख्तिलाफ़ात इस वजह से पैदा हुये और शिद्दत इख्तियार कर गये कि लोगों ने यह नज़र अंदाज कर दिया कि नमाज़ उम्मत को ग़ैर मामूली अमली तवातुर से मिली है, अगर दलीलों और साक्ष्यों की रोशनी में तमाम मुसलमानों पर यह हक़ीक़त स्पष्ट हो जाये, और उन्हें यह इत्मीनान हो जाये कि चारों इमामों के ज़मानें में नमाज़ की जितनी शक्लें बयान की गयीं हैं वह सब तवातुर से साबित हैं और अैन सुन्नते रसूल के मुताबिक हैं, तो नमाज़ के किसी एक तरीक़े के बजाये सारे तरीक़ों से मुहब्बत और उन्सीयत पैदा हो जायेगी और उसके नतीजे में इख्तिलाफ़ या विवाद का एक बहुत बड़ा दरवाज़ा बन्द हो जायेगा। नमाज़ के सिलसिले में हमारा मिसाली रवइया यह होना चाहिये कि नमाज़ पढ़ता हुआ आदमी अच्छा लगे चाहे उसके और हमारे तरीक़ये नमाज़ में कहीं–कहीं कुछ फ़र्क़ नज़र आता हो। उसकी नमाज़ और इतनी ही अच्छी लगे जितनी अच्दी अपनी नमाज़ लगती है। आमीन कुछ ज़ोर से कहना भी अच्छा लगे और आमीन कुछ धीरे से कहना भी अच्छा लगे, कि यह सब कुछ उम्मत ने पैग़म्बरे उम्मत से सीखा है, नमाज़ पढ़ने वालों की हर

अदा रसूले-उम्मी की अदा है, इसलिये हर अदा अच्छी लगनी चाहिये। इस्लाम के दौरे अव्वल में नमाज़ के तरीकों में तुनूअ (अलग-अलग क़िस्म का होना) उम्मत में इख्तिलाफ़ का सबब नहीं बनता था, अल्लामा इब्ने तैमिया से सवाल किया गया कि चारों मसलकों से वावस्ता लोगों की एक दूसरे के पीछे नमाज़ सही तौर से अदा हो जायेगी ?

अल्लामा इब्ने तैमिया ने इस सवाल का बहुत ज़बरदस्त जवाब दिया, उन्होंने फ़रमाया, उनकी एक दूसरे के पीछे नमाज़ जाइज़ है जैसा कि सहाबा रज़ि० ताबिईन रह० और उनके बाद चार इमामों का तरीक़ा था, कि वह एक दूसरे के पीछे नमाज़े पढ़ते थे, जबकि इन मसलों में उनके दरम्यान इख्तिलाफ़ भी था, लेकिन सलफ़ में किसी ने यह नहीं कहा कि वह एक दूसरे के पीछे नमाज़ें न पढ़ीं, जो इस हक़ीक़त से इनकार करेगा वह दरअस्ल बिद्दती, गुमराह और किताब व सुन्नत और सलफ़े उम्मत के इज्माअ का मुखालिफ़ है।

सहाबा-ए-कराम ताबिईन और उनके बाद वालों में कुछ लोग नमाज़ मेंबिस्मिल्लाह पढ़ते थे, और कुछ नहीं पढ़ते थे, कुछ आवाज़ से पढ़ते थे, और कुछ आवाज़ से नहीं पढ़ते थे, कुछ फज्र में कुनूत पढ़ते थे, और कुछ नहीं पढ़ते थे। कुछ थे जो हजामत, नकसीर और क़ै की वजह से वुज़ू करते थे और कुछ इन असबाब से वुज़ू नहीं करते थे,

कुछ शर्मगाह छूने और औरत को शहवत से छूने के सबब से वुज़ू करते थे, और कुछ इन अस्बाब से वुज़ू नहीं करते थे, कुछ नमाज़ में कहकहा लगाने के सबब से वुज़ू करते थे और कुछ इस सबब से वुज़ू नहीं करते थे, कुछ ऊँट का गोश्त खाने के सबब से वुज़ू करते थे और कुछ इस सबब से वुज़ू नहीं करते थे, इस सबके बावजूद वह एक दूसरे के पीछे नमाज़ें पढ़ा करते थे, जैसा कि इमाम अबू हनीफ़ा, और उनके शागिर्दो का और इमाम शाफ़िई का और दीगर लोगों का मामला था, कि वह मदीना के मालिकी इमामों के पीछे नमाज़ें पढ़ते थे, जबकि वह लोग नमाज़ में बिस्मिल्लाह न आवाज़ से पढ़ते थे, न बिला आवाज़ के पढ़ते थे, इसी तरह इमाम अबू यूसुफ़ रह० ने हारून रशीद के पीछे नमाज़ पढ़ी, जबकि उसने हजामत करवाई थी, और इमाम मालिक ने इस पर फ़तवा दिया था कि उसे हजामत के बाद वुज़ू की ज़रूरत नहीं है, चुनांचे इस के पीछे इमाम अबू यूसुफ़ ने नमाज़ पढ़ी और नमाज़ नहीं दुहराई, इसी तरह इमाम अहमद बिन हम्बल की राय थी कि हजामत और नकसीर के सबब से वुज़ू करना चाहिये, उनसे पूछा गया कि अगर इमाम (की नकसीर फूट जाये) और खून निकले और वह वुज़ू न करे तो क्या आप इस इमाम के पीछे नमाज़ पढ़ेंगे ? उन्होंने कहा मैं सईद बिन मुसइयब और मालिक के पीछे नमाज़ कैसे नहीं पढूंगा ?

इस तारीखी हक़ीक़त को कम व बेश इन्हीं अल्फ़ाज़ में शाह वली उल्लाह देहलवी ने ''हुज्जतुल लाहिल बालिग़ा'' में भी ज़िक्र किया है। दरअस्ल बुज़ुर्गो की तकलीद करने वालों के लिये इस तारीखी बयान में बड़ा सबक है। और यह उसी वक्त मुम्किन है जब नमाज़ के मुखतलिफ़ मसायल के सिलसिले में लोग अपना नुकतये नज़र दुरुस्त करें, और खासतौर से नमाज़ के सिलसिले में अपने मोक़िफ़ (Stand) के साथ दूसरों के मोकिफ को भी दुरुस्त मानें और यह समझें कि नमाज़ के मसायल के बारे में सबका मोकिफ़ सुन्नते रसूल के मुताबिक़ है।

### *इख्तिलाफ़ की वजहों के बारे में एक ग़लत फ़हमी–*

उम्मत के इख्तिलाफ़ की हक़ीक़त और उसके असबाब की पहचान करने वालों ने इख्तिलाफ़ के कई सबवों का ज़िक्र किया है : जिनमें से एक सबब यह बताया जाता है कि कभी–कभी किसी मुज्तहिद (सही रास्ता निकालने वाला) तक या किसी इलाके के लोगों तक सही रिवायत नहीं पहुँच पाई, और उन्होंने अस्ल दलील से नावाकिफ़ होने की वजह से एक कमज़ोर मोकिफ़ इख्तियार कर लिया। ज़ाहिर है कि ऐसी सूरत में उनके ऊपर और उनके बाद वालों पर लाज़िम है कि सही रिवायत से वाकिफ़ हो जाने के बाद इस कमज़ोर मोकिफ से रुजूअ करें और दलील के मुताबिक़ सही मोकिफ़ अपनायें।

उम्मत के दरम्यान फ़िक़्ही (क़ानूनी) इख्तिलाफ़ात की एक वजह यह भी हो सकती है, और उसके इमकान से कोई इन्कार नहीं कर सकता है, लेकिन यह सूरत फर्ज़ नमाज़ों के रोज़ाना दुहराये जाने वाले आमाल पर ठीक नहीं बैठती है। जो मसायल कभी कभार पेश आते हैं, उनके सिलसिले में ऐसी सूरत मुम्किन है, कि अल्लाह के रसूल सल्ल० की तालीम किसी सहाबी को मालूम हो सकी हो और किसी सहाबी को मालूम न हो सकी हो। इसकी मशहूर मिसाल सही मुस्लिम में दर्ज वह वाक़िया है जो हज़रत उमर रज़ि० के ज़माने में पेश आया, जब आप मुल्क शाम की तरफ निकले, रास्ते में एक जगह हज़रत अबू उबैदा बिन जर्राह अपने सार्थियों के साथ आकर मिले और बताया कि शाम में महामारी फैली हुई है इस मौक़े पर लोगों में इख्तिलाफ़ हो गया, कि शाम में दाखिल होना चाहिये या इरादा बदल देना चाहिये। इसी बीच अ० रहमान बिन औफ आये, और उन्होंने कहा कि मैंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से हदीस सुनी है, आपने फरमाया था– जब तुम किसी इलाके के बारे में सुनो कि वहां महामारी फैली हुयी है तो वहां मत जाओ, और अगर किसी इलाके में तुम्हारी मौजूदगी में महामारी फैल जाये तो वहां से मत भागो। उस पर हज़रत उमर रज़ि० ने अल्लाह का शुक्र अदा किया और अपना इरादा बदल दिया। (मुस्लिम)

इस तरह कभी कभार पेश आने वाले हालात के बारे में यह माना जा सकता है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० की बताई हुई रहनुमाई उस वक्त मौजूद कुछ सहाबा तक पहुँच सकी और जो सहाबा उस वक्त मौजूद नहीं थे उन तक वह रहनुमाई नहीं पहुँच सकी, उक्त घटना के अलावा इसकी और भी बहुत सी मिसालें हैं। लेकिन फर्ज़ नमाज़ों का मामला इससे बिलकुल अलग है, यह तो सहाबा की पूरी उम्मत ने सालों साल रोज़ाना पांच बार अल्लाह के रसूल सल्ल० से सीखी और इस ज़ब्बे से सीखी कि उसे ठीक-ठीक आपके तरीके के मुताबिक पढ़ना है, इसके सिलसिले में यह मानने की गुन्जाइश नहीं है कि एक भी सहाबी अल्लाह के रसूल के सिखायें हुये तरीके से नावाकिफ रह गया होगा। उसमें अगर कोई अमल अफ़जल रहा होगा तो सब उससे वाकिफ रहे होंगे, इसमें कोई से अन्जाम दिया गया होगा तो भी सब इससे वाकिफ रहे होंगे।

गर्ज़ फर्ज़ नमाज़ों के आमाल के बारे में यह बात कहना कि हो सकता है अल्लाह के रसूल का साबित अमल या आखिरी वक्त का अमल उम्मत के किसी गिरोह तक न पहुँचा हो, सही नुकतये नज़र नहीं है। उम्मत तक फ़र्ज़ नमाज़ों के जो आमाल पहुँचे, वह सब अल्लाह के रसूल से साबित हैं और वह सब ग़ैर मन्सूब सुन्नतें हैं।

***नमाज़ों का इख्तिलाफ, क़िरअतों जैसा इख्तिलाफ़ है-***

शाह वली उल्लाह देहलवी रह० ने फ़क़ीहों (इस्लामी

क़ानूनदां) के दरम्यान इख्तिलाफ़ात के बारे में एक दरम्यानी मोकिफ़ पेश किया किया है, वह फ़रमाते हैं ''फकीहों के दरम्यान जो इख्तिलाफी सूरतें है, उनमें ज़्यादातर सूरते, खासतौर से वह मसायल जिनमें सहाबा के कौल दोनों तरफ नज़र आते हैं जैसे तशह्हुद बिस्मिल्लाह बिला आवाज़ पढ़ना, आमीन बिला आवाज़ कहना, इकामत के अल्फाज़ को दो-दो बार और एक-एक बार कहना, वगैरा तो यह इख्तिलाफ़ दरअस्ल दो कथनों में से एक को राजेह (बेहतर) क़रार देने का है, सलफ यानी बुजुर्गो में इख्तिलाफ़ इसमें नहीं था कि दोनों में से कौन सा अमल शरीअत के मुताबिक है और कौन सा अमल शरीअत के मुताबिक़ नहीं है, बल्कि इसमें था कि दोनों में बेहतर कौन है। फ़क़ीहों के इन इख्तिलाफ़ात की मिसाल मुखतलिफ किरअतों में कारियों का इख्तिलाफ़ है, चुनांचे बहुत ऐसा होता है, कि फ़ुक़हा इस बात में यह वजाहत करते हैं कि सहाबा में इख्तिलाफ़ है, और वह सब सही राह पर हों।

शाह वली उल्लाह देहलवी रह. ने इस बयान में एक बहुत अहम बिन्दु यह बयान किया है, कि सहाबा के दरम्यान जो इख्तिलाफ़ात और मतभेद हुये वह किरअत के इख्तिलाफ़ जैसे थे, यह बात सहाबा के तमाम इख्तिलाफ़ात पर सादिक आये या न आये, फिर भी फर्ज़ नमाज़ों के बारे में यह बात पूरे इत्मीनान के साथ कही जा सकती है कि

सहाबा और ताबिईन अगर मुखतलिफ तरह से नमाज़ पढ़ते थे तो वह दरअस्ल नमाज़ की मुखतलिफ किरअतें थीं और जो उन्होंने अल्लाह के रसूल सल्ल० से बीसों साल के लम्बे अरसे में रोज़ाना पांच दफा सीखी थीं।

शाह वली उल्लाह ने ज़िक्र किया कि फकीहों में इस तरह के मसलों में इख्तिलाफ दरअस्ल तरजीह (प्राथमिकता) का इख्तिलाफ था, जाइज और नाजाइज का इख्तिलाफ नहीं था, शाह साहब की यह बात कुछ ग़ौर तलब है। कभी-कभी पेश आने वाले बहुत सारे मसायल के बारे में तो तरजीह का इख्तिलाफ़ तर्कसंगत और फ़ितरी है, ताहम फर्ज़ नमाज़ों के जो मुख्तलिफ़ तरीक़े उम्मत में दौरे अव्वल से रायज हैं, उनमें तरजीह के इख्तिलाफ़ की ज़रूरत नहीं थी। बल्कि मुनासिब और माक़ूल तरीक़ा यही था कि इन सारे आमाल को बिला तर्जीह के क़ुबूल कर लिया जाता, क्योंकि उनमें से हरेक की पुश्त पर उम्मत के तवातुरे अमली की दलील मौजूद है।

### *फ़िक़ह के निसाब पर नज़्रे सानी की ज़रूरत :-*

फ़िक़ह की किताबों में आमतौर से यह आम गलती पाई जाती है कि वह नमाज़ की मुखतलिफ़ सूरतों को इमामों और उनके मसलकों से जोड़कर उनकी वकालत करती है, उनकी दलीलों में एहसास कायम होता है कि नमाज़ की सूरत गरी में इमामों के इज्तिहाद को बड़ा दखल रहा है,

नमाज़ के सुबूत की सबसे बड़ी दलील यानी उम्मत के बेनज़ीर अमली तवातुर को नज़र अन्दाज़ कर दिया जाता है, और रिवायतों को अस्ल दलील मानकर रिवायतों की तौजीह व तावील (व्याख्या) पर मेहनत की जाती है जिससे रिवायतों की दलालत भी प्रभावित होती है, और साफ ज़ाहिर होता है कि दलील से ज़्यादा राय से मुहब्बत है।

बिलाशुब्हा आज ज़रूरत है फ़िक़्ह की ऐसी किताबों की तैयारी की, जिनमें सारी शरई दलीलों का इहतिराम हो, मुतावातिर अमली सुन्नत का भी लिहाज़ हो, हदीस और आसार का भी ख्याल हो, और फिर साथ ही साथ इमामों के इज्तिहाद व इस्तेम्बात (सही रास्ता निकालना) का भी इहतेराम हो। मदरसों में जब इस तरह की किताबें पढ़ाई जायेंगी तो मुस्बत (Positive) सोच रखने वाला और पूरी उम्मत और सारी शरीअत से मुहब्बत करने वाला ज़ेहन तैयार होगा।

हमारे मदरसों का फ़िक़्ही निसाब ऐसी किताबों पर आधारित होना चाहिये जो इज्तिहादी एहकाम और बुनियादी एहकाम में फ़र्क़ करें, इबादतों के वहा मामले जिनमें इज्तिहाद की गुन्जाइश नहीं है, और जैसा अल्लाह के रसूल सल्ल० ने किया वैसा ही करने की हिदायत और तालीम है, वहां अमली तवातुर से साबित इहकाम को ज़िक्र करना उनके हक़ में जो रिवायतें हैं चाहे वह किसी भी दर्जे

की हों उनका तज़किरा कर देना, और उनके अन्दर जो हिकमत के पहलू हैं उन्हें बयान कर देना बहुत मुनासिब और मुफीद होगा। फिक़्ह के जिन मामलों में अल्लाह के रसूल सल्ल० से उम्मत को एक से ज़्यादा तरीक़े मिले हैं, उन मामलों में वह सारे तरीक़े इस तौर से बयान करना कि यह सब सुन्नत के मुताबिक़ तरीक़े हैं, तालिब इल्मों की मुस्बत ज़ेह्नी तर्बियत में बहुत मददगार होगा और उनसे उम्मीद की जा सकेगी कि वह आगे इत्तेहादे उम्मत के लिये बड़ा रोल अदा कर सकेगे।

इमाम इब्ने मुन्ज़िर की किताब ''अल-इकनाअ'' में एक जगह नमाज़ पढ़ने का तरीका बयान किया गया है, इसमें एक इबारत मुझे बहुत मुनासिब लगी, और मेरा ख्याल है कि इस तर्ज़ पर भी नमाज़ के ऊपर निसाबी किताब तैयार की जा सकती है, सजदे के बाद कैसे उठ कर खड़ा होना चाहिये, इसे वह यूं बताते है कि ''अगर चाहो तो अपने पांव की एड़ियों पर ही उठ जाओ और मत बैठो और अगर चाहो तो सीधे बैठ जाओ, फिर दोनों हाथ से ज़मीन का सहारा लेते हुये उठो यहां तक कि सीधे खड़े हो जाओ''

अगर पूरी नमाज़ को इस तरीके पर सिखाया जाये, तो सारी नमाज़ों से लगाव और उन्सीयत पैदा होगी।

नमाज़ के मामले में जहां बहुत सारे आमाल के एक से ज़ायद तरीके अल्लाह के रसूल सल्ल० से उम्मत को

मिले हैं, वहां किसी एक ही मसलक को सही साबित करने के लिये दलीलों का अम्बार लगाना, और बाकी मसलकों को कमज़ोर साबित करने के लिये वजूहात व अस्बाब जमा कर देना एक लाहासिल अमल है, इससे ''हम ही दुरुस्त हैं, और दूसरे ग़लत है'' का मनफ़ी (Negative) और बीमार ज़ेहन तैयार होता है।

फ़िक़ह के निसाब में एक बड़े बदलाव की ज़रूरत इस तौर से भी है कि तौक़ीफ़ी मसलों (अल्लाह के मुक़र्रर किये हुये) के बजाये ज़्यादा तवज्जो इज्तिहादी मसायल पर केन्द्रित की जाये, क्योंकि इज्तिहादी मसायल में फिक़ह के इमामों के इज्तिहाद पर जिस क़दर ज़्यादा गौर व फिक्र किया जायेगा, उसी क़दर इज्तिहादी ज़ौक और फिक़ही पुख्तगी परवान चढ़ेगा।

कुछ मदरसों में देखा जाता है कि फ़िकह की तालीम का बेशतर वक्त नमाज़ से मुताबिक इख्तिलाफ़ी बहसों में गुज़र जाता है, और उन मामलों की तालीम के लिये मुनासिब वक्त नहीं मिल पाता जिनका ताल्लुक़ हमारी अमली ज़िन्दगी के दूसरे गोशों से है, कुछ मदरसों में हदीस की तालीम भी इस तरह दी जाती है, कि ज़्यादा वक्त नमाज़ से मुताल्लिक इख्तिलाफ़ात और उनकी आलोचना में लग जाता है। इन तरीक़ों के बजाये मुफीद तरीक़ये तदरीस इख्तियार करना चाहिये।

### *फिक़ही फैसलों का इख्तिलाफ़ात :–*

अल्लाह के रसूल सल्ल० ने नमाज़ का जो तरीक़ा

बताया था, कि इस तरह सब लोगों को नमाज़ पढ़ना चाहिये, इसमें यह नहीं बताया था कि इसमें क्या वाजिब है और क्या सुन्नत है, आपने नमाज़ का जो तरीक़ा सीखा या उसके हर जुज का फ़िक़ही हुक्म निर्धारित करने का काम फुकहा-ए-कराम ने अंजाम दिया और फ़िक़ही हुक्म निर्धारित करने में उनके दरम्यान भी इख्तिलाफ़ हो जाता है।

फ़िक़ही फ़ैसलों के दरम्यान इख्तिलाफ़ात का जाइजा लेते हुये हम देखते हैं कि कभी-कभी नमाज़ के अस्ल तरीक़े में इख्तिलाफ़ नहीं होता है, अस्ल तरीक़े पर तो सबका इत्तेफाक़ होता है, अल्बत्ता उस तरीक़े की हैसीयत निश्चित करने में इख्तिलाफ़ हो जाता है।

मगरिब की नमाज़ या दूसरी चार रकअत वाली नमाज़ों में दूसरी रकअत के बाद तशह्हुद के लिये बैठना और बैठकर तशहुद पढ़ना सबके नजदीक मतलूब है, इसके मतलूब होने में कोई इख्तिलाफ़ नहीं है, अलब्तता इमाम अहमद का एक कौल है और इमाम लैस और इमाम इसहाक़ का भी यह क़ौल है कि ऐसा करना वाजिब है, जबकि अधिकतर फुक़हा की राय है कि यह वाजिब नहीं है।

आखिरी रकअत में तशहुद के बाद दरूद पढ़ना सबके नज़दीक मतलूब है, अलबत्ता इसकी हैसीयत निश्चित करने में इख्तिलाफ़ हो गया, इमाम इब्ने मुन्ज़िर कहते हैं ''हमारी राय यह है कि जो भी नमाज़ पढ़े, वह

दरूद भी पढ़े, लेकिन हम उसको वाजिब नहीं क़रार देते है, और अगर कोई छोड़ दे तो इस पर नमाज़ दुहराना लाज़िम नहीं करते, यही मालिक और अहले मदीना का मसलक है, सुफ़ियान सौरी का और ईराक़ के अहले राय और दूसरे लोगों का, और तमाम अहले इल्म का मसलक है। सिवाये शाफ़िई के कि अगर नमाज़ पढ़ने वाला दरूद न पढ़े तो वह नमाज़ को दुहराना ज़रूरी क़रार देते हैं। इसहाक कहते थे इमाम हो या मुकतदी, अगर तशहुद से फारिग हो जाये तो दरूद पढ़े, ऐसा नहीं करने से उसकी नमाज़ नहीं होगी, बाद में यह भी कहा : अगर भूले से छोड़ दिया तो उम्मीद करते हैं कि नमाज़ हो जायेगी।

इस तरह के इख्तिलाफ़ की और भी मिसालें हैं। इस इख्तिलाफ का असर उस वक्त ज़ाहिर होता है जब कोई भूल कर या जानबूझ कर वह अमल छोड़ दे, जब तक सब लोग इस अमल पर कारबन्द रहते हैं, ज़ाहिर है कि इसका कोई असर नहीं आता कि कौन इस अमल को सुन्नत समझ कर, कर रहा है और कौन वाजिब मानकर कर रहा है।

### *शिद्दत पसन्दाना फ़िक़्ही फैसलेः–*

फ़िक़्ही इहकाम निर्धारित करने का काम भी अहम था और फ़ुकहा ने यह अज़ीम ज़िम्मेदारी अंजाम दी फिर भी इनकी जानिब से कभी–कभी ग़ैर मुहतात और शिद्दत पसन्दाना रवइये भी सामने आये और उस तरह के रवइयों

ने इख्तिलाफ़ात की जड़ों को गहरा करने में बड़ा रोल अदा किया।

इस शिद्दत पसन्दी की एक सूरत यह होती है कि नमाज़ का एक अमल किसी एक फ़क़ीह के यहां वाजिब की हद तक मतलूब हो जाये, और वही अमल दूसरे फ़क़ीह के नजदीक मकरूह तहरीमी की हद तक ग़ैर मतलूब हो जाये, हालांकि मामले की हक़ीक़त सिर्फ यह होती है कि इस अमल को करना और नहीं करना दोनों दुरुस्त होते हैं।

### *नस्ख (निरस्त) का दावा करने की बेएतेदाली :–*

बहुत से फ़ुक़हा के यहां देखा जाता है कि वह फरीक़ मुक़ाबिल की साबित शुदा हदीसों के बारे में कह देते हैं कि वह हैं तो साबित मगर मन्सूख (निरस्त) हैं। इस रवइये के बड़े नुकसानात हैं एक तो सही हदीसों से साबित आदेशों को केवल अपने इज्तिहाद से निरस्त क़रार दे देना एक बड़ा दुस्साहस है, दूसरे जिस अमल को निरस्त मान लिया उसे नमाज़ में करने को मकरूह और मकरूह तहरीमी क़रार देना पड़ता है, जबकि हदीस की बिना पर वह अमल इन दूसरे लोगों के यहां सुन्नत क़रार पाता है, जो इस हदीस को मंसूख नहीं मानते है। अगर हम तवातुर अमली की दलील को रहनुमा मान लेते है, तो इस दलदल से बाहर निकल आते हैं, और किसी हदीस को मंसूख मानने की ज़रूरत नहीं रहती, और न ही ऐसे किसी अमल को मकरूह कहना

पड़ता है जिसे दूसरे फ़ुकहा सुन्नत कहते हैं, बल्कि तवातुर की बुनियाद पर दोनों के मोकिफ़ अैन सुन्नत क़रार पाते हैं।

*बहस का खुलासा :–*

इस वक्त उम्मत में नमाज़ के जो तरीक़े रायज और प्रचलित हैं, वह वही हैं जो दूसरी सदी हिजरी में फ़िक़ह की सम्पादन के वक्त रिकार्ड किये गये, इन तरीक़ों में कहीं आपस में पूरा इत्तेफ़ाक़ है तो कहीं इख्तिलाफ़ भी है, लेकिन यह इख्तिलाफ़ तज़ाद (विरोध) का इख्तिलाफ़ नहीं है बल्कि तुनूऊ (अलग–अलग किस्म का) का इख्तिलाफ़ है, अगर कहीं तज़ाद नज़र आता है तो वह फ़ुक़हा के नुकतये नज़र की बात है, वरना हक़ीक़त में वह सिर्फ तुनुऊ का इख्तिलाफ़ है, अल्लाह के रसूल सल्ल० ने मुखतलिफ़ तरीक़े या तो खुद इख्तियार फ़रमाये या मुख्तलिफ़ तरीक़ों से नमाज़ पढ़ने की गुन्जाइश रखी और उसकी इजाजत दी, वह मुख्तलिफ़ तरीके मुख्तलिफ इलाकों में अलग–अलग रायज होकर फ़ुक़हा और चारों इमामों तक एक जबरदस्त अमली तवातुर के साथ पहुँचे, और इस तरह फ़ुकहा के ज़रीये उनकी तदवीन अमल में आयी।

नमाज़ के तरीक़े तो असलन अमली तवातुर के ज़रीये पहुँचे, और इसलिये उनकी हैसीयत मसनून तरीकों की है, साथ ही उनके सिलसिले में रिवायतें भी आयी इन रिवायतों के मुखतलिफ़ दर्जे हो सकते हैं, लेकिन यह नमाज़

के तरीक़ों की अस्ल दलील नहीं हैं, अस्ल दलील तो अमली तवातुर है, इन रिवायतों में जो सही है, वह सर आंखों पर, लेकिन नमाज़ के तमाम रिकार्ड शुदा तरीके चाहे उनके हक़ में रिवायतें दस्तयाब हों या न हों या रिवायतें तो हों लेकिन ज़ईफ़ हों, वह सब तरीक़े बहर सूरत यकसां तौर से मसनून और अफज़ल के हुक्म में होंगे।

रसूल सल्ल० की उम्मत के हर फर्द को यह हक़ हासिल है कि वह जब चाहे उन मसनून तरीक़ों में से जिस तरीक़े पर चाहे अमल करें, चाहे वह किसी मसलक से ताल्लुक़ रखता हो। किसी को यह हक़ नहीं पहुंचता कि किसी तरीक़े नमाज़ को तनकीद और आलोचना का निशाना बनाये। क्योंकि यह सब तरीके अमली तवातुर की कतई दलील से साबित हैं।

***तरीक़े पर झगड़ने के बजाये कैफ़ीयत पर तवज्जो दीजिये–***

पिछली सदियों में नमाज़ के तरीक़ों को लेकर उम्मत में बहुत ज़्यादा झगड़े हुये, मस्जिदों में मार पीट और खून खराबा हुआ, मस्जिदें बट गयीं, उम्मत में फ़िरक़ाबन्दी के कड़वे फल पूरी उम्मत ने चखे और आज तक चख रही है।

इस वक्त भी दुनिया में मुखतलिफ लोग नमाज़ को सही करने की तहरीक चला रहे हैं, उनका यह दावा है कि उम्मत नमाज़ के जिस तरीक़े पर क़ायम है वह रसूलुल्लाह

के तरीक़े के मुताबिक नहीं है, इस तरह की तहरीकों से इख्तिलाफ़ात में शिद्दत आ रही है और बेचैनी बढ़ रही है।

कहीं लोगों का खुद अपनी नमाज़ों से एतेमाद उठ रहा है, तो कहीं यह ख्याल पनप रहा है कि हमारे बाप-दादा ग़लत तरीक़े पर नमाज़ पढ़ते थे, या हमारे आस-पास के लोगों की नमाज़ें सही नहीं हैं, कहीं अपनी नमाज़ों पर बेइत्मीनानी बढ़ रही है तो कहीं बरतरी का एहसास पैदा हो रहा है कि सिर्फ हम अल्लाह के रसूल की नमाज़ पर अमल पैरा हैं।

यह सूरतेहाल तशवीशनाक है, और इसकी वाहिद वजह इस तरीक़े से नावाकफ़ियत है जिस तरीक़े से उम्मत को नमाज़ मिली है। याद रहे कि उम्मत को नमाज़ इमामों और रावियों के ज़रीये नहीं मिली है, इसलिये रावियों की रिवायतों का हवाला देकर इमामों के मसलक का हवाला देकर किसी भी तरीकये नमाज़ को ग़लत करार देना सही नहीं कहा जा सकता।

जिस तरह क़ुरआन मजीद की किसी आयत को क़ुरआन की आयत साबित करने के लिये किसी रिवायत या किसी खास इमाम की ताइद और समर्थन की ज़रूरत नहीं है, इसी तरह नमाज़ के किसी भी अमल को सही साबित करने के लिये किसी रिवायत की या किसी खास इमाम की ताईद की ज़रूरत नहीं है। उम्मत को क़ुरआन मजीद जिस

अज़ीम तवातुर से मिला है, नमाज़ भी उसी अज़ीम तवातुर से मिली है। इसलिये यह मानना चाहिये कि उम्मत के सारे गिरोह नमाज़ के जिस जिस तरीक़े पर अमल पैरा है वह सारे तरीक़े सही हैं।

अल्लाह तआला ने इस्लाम को एक दीन के तौर पर हमारे लिये पसन्द किया, इसको मुकम्मल किया, और उसको कियामत तक के तमाम इन्सानों के लिये महफूज़ किया, कि हर दौर के इन्सानों के लिये दीने हक़ का यह रास्ता मौजूद रहे। दीने हक़ महफूज़ है, यह हमारा अक़ीदा है। इसी अक़ीदे का एक हिस्सा यह भी है कि नमाज़ जिसे दीन का सुतून (पिलर) बताया गया है, जो इस्लाम का अहम रुक्न है, जो इबादत का बेहतरीन तरीक़ा है, वह भी बिला शुब्हा महफूज है।

न हमारे ज़ेहन के किसी हिस्से में यह ख्याल आना चाहिये, न हमारी किसी गुफ्तगू से यह तास्सुर मिलना चाहिये कि सहाबा-ए-कराम या ताबिईन या उनके बाद आने वाली नस्ल में जो कि फ़ुक़हा व मुहद्दिसीन का ज़माना था उम्मत के किसी काबिले लिहाज़ हिस्से को नमाज़ के ज़ाहिरी एहकाम से सही वाकफीयत नहीं थी, या यह कि उन तक नमाज़ सही सूरत में नहीं पहुँच सकी थी।

हक़ीक़त यह है कि जिस ज़माने में फ़िक़्ह का सम्पादन हुआ और हर चीज़ बाकाइदा तहरीरी रिकार्ड में

लाई गयी, इस जमाने में पूरी उम्मत नमाज़ से अच्छी तरह वाकिफ थी, और उनके दरम्यान नमाज़ अपनी तमाम बारीकियों के साथ पूरी तरह महफूज़ थी।

क़ुरआन मजीद की हिफाज़त की ज़िम्मेदारी अल्लाह तआला ने ली है, और इस पर ग़ौर व फिक्र और अमल करेगा, इसी क़दर क़ुरआन मजीद से फैजयाब और दुनिया व आखिरत में कामयाब होगा।

इसी तरह नमाज़ के तरीक़े को अल्लाह तआला ने महफूज़ रखा है, इसमें आपसी लड़ाई-झगड़ा लाहासिल है, इन्सानों की ज़िम्मेदारी तो इस तरीके में रंग भरना है, यही अस्ल मुक़ाबले का मैदान है, नमाज़ पढ़ते हुये जो खुशूअ व खुज़ूअ (एकाग्रता और विनम्रता) आगे बढ़ेगा वह अल्लाह से ज़्यादा करीब होगा, कि नमाज़ अल्लाह से करीब होने का ज़रीया है।

*आखिरी बात :-*

अक़्ल व मन्तिक़ का भी तकाज़ा है और सुन्नत की समझ और उससे मुहब्बत का भी तकाज़ा है कि नमाज़ की ज़ाहिरी शक्ल को इख्तिलाफ़ का विषय न बनाया जाये, दौरे अव्वल से ज़ारी नमाज़ के सारे तरीक़ों को दुरुस्त और सुन्नत के मुताबिक माना जाये, और एक दूसरे की नमाज़ को क़द्र और इहतेराम की नज़र से देखा जाये।

उम्मत की मौजूदा सूरतेहाल फौरी तवज्जो की

तालिब है। ज़रूरत है कि उम्मत के तमाम अहले इल्म और सारे तालीम व तर्बियत के ज़िम्मेदार मिलकर एक ज़ोरदार तहरीक चलायें कि लोगों की नमाज़ों के अन्दर ख़ुदा से डर और मुहब्बत की कैफ़ीयत पैदा हो, नमाज़ की रूह तक उनकी रसाई हो, नमाज़ के ज़ेरे साया फर्द और समाज की बेहतरीन तामीर हो, नमाज़ के ज़रीये उम्मत में इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक का माहौल बने, नमाज़ की बदौलत अल्लाह से क़ुरबत हासिल हो और नमाज़ की मदद से उम्मत की खोई हुई अज़मत और खोई हुई दौलत को दोबारा हासिल किया जा सके।

दरहक़ीक़त इसी राह पर चल कर हम अल्लाह के रसूल सल्ल० की नमाज़ तक रसाई हासिल कर सकते हैं। अल्लाह हम सब को उसकी तौफ़ीक़ दें।